७०९

१५/३३२

सौमापञ्चक

॥अथमनीषापंचक भाषाटीका सहित

॥ काव्यछन्द ॥

श्रीमुन्शीहरिवंशलाल अरु छेदीलाल
हू। लहि सहायता शिवकुमार पण्डित
बुधिआलहु। भाषाटीका रची मनी
षापचककेरी। षड्दरशनसि
द्धान्तमुख्यवेदान्त निवेरी॥

श्रीबाबू अविनाशी
लालकीआज्ञा
नुसार॥२

गोपीनाथपाठक ने बनारस लैट प्रेसमें
मुद्रितकिया॥

संवत्१९३१ ॥ सन्१८७४ ॥ श्री

श्री ॥

ॐ अखण्डमूर्त्तयेनमः

भूमिका

॥श्रीगणेशायनमः यह बात प्रसिद्ध है कि संसार में प्राणी मात्र सबके मन में अनेक प्रकार का भिन्न २ कल्पना और क्लेश रात-दिन बना रहता है जो सुख में हैं उन्हे भी कोई ऐसा समय नंही है कि जिस में किसी प्रकार का दुःख मनन न रहे इसलिये सब कोई-निरन्तर अपने २ क्लेश छुड़ाने का उपाय अनेक प्रकार से जीवन पर्य्यन्त करते रहते हैं परन्तु यथार्थ ज्ञान न होने से कदापि शोक-

रूपी सरिताकी धारा बन्द नहीं होती एक दुःख दूर होतेही दूसरा साथ ही अवश्य विद्यमान होताहै। अतएव यह क्लेश छुड़ाने के हेतु बड़े बड़े विद्वानों ने अनेक प्रकार के उपाय अपनी २ बुद्धि के अनुसार हितोपदेश किएहैं जैसे गौतम ऋषीने न्याय शास्त्र में प्रमाण प्रमेय आदि सोलह पदार्थ के ज्ञान से इस क्लेश के दूर होनेका उपाय लिखाहै। कणाद ऋषी ने वैशेषिक शास्त्र में सात पदार्थ के जानने से क्लेश दूर होने का उपाय कहाहै कपिल मुनी ने साङ्ख्य शास्त्र में प्रकृति पुरुष का भेद जानने से क्लेश ध्वंश होने का उपाय उपदेश कियाहै। पतञ्जलि ऋषीने योग शास्त्र में चित्तकी वृत्ति निरोध कर ईश्वर के ध्यान में

एकाग्र करने से दुःखनाश होने का यत्न वर्ण
न कियाहै । जैमिनिऋषीने वेदविहित कर्म
करनेसे दुःखकी निवृत्ति लिखाहै । और कृ
ष्णद्वैपायनव्यास देवने वेदान्त सूत्र में आ-
त्मज्ञान होने से दुःखकी अत्यन्त निवृत्ति -
निर्माण कियाहै । इन सब लिखित मतों में
व्यासदेवका मत सब श्रेष्ठ सुलभ और क-
ल्याणदायक है जो दशों उपनिषद वेदान्तमें
सिद्धान्तहै । और इसीमत को शङ्कराचार्य्य
आदि महानुभाव लोगोंने स्वीकार किया फि
र परमपरा महात्मा लोग इस मत को सिद्धा-
न्त और निश्चित जान अपना कल्याणदायक
औ आनन्दजनक मन ठान लिया । यहाँ त-
क कि इस देश का सर्व साधारण मत होगया

था और इस कारण इस देश के लोग भूमंड
ल में अपने को सुर और आर्य जानते रहे हैं
परन्तु बड़े खेद की बात है कि विपरीत का-
ल के प्रभाव से यह विद्या और ज्ञान नष्ट-
होगया इसी से सब में सर्वोत्तम होकर यहाँ
के लोग निकृष्ट होगए और इसका अभ्या
स छोड़ देने से कि जिससे सब मनुष्य समा
न औ एकता रखते थे परस्पर एक दूसरे
के उपकारी रहे सो अनेकाकार और पृथ
क् २ होगए। इसकारण परस्पर रागद्वेष-
औ अल्पज्ञता उत्पन्न हुई जिससे उपकार के मिस से
अपकार होने लगा और सुख के स्थान में दुःख आ
या इससे खिन्न भिन्न हो अति क्लेश को प्राप्त हुए
इसके व्याख्या कि कुछ आवशक्यता नहीं

क्योंकि विदित है। और इसमत के लोप होनेका कारण यहहुआ कि इसके शब्दार्थ-साधारण लोगों ने आलस्य से गूढ़ जान यथार्थ नही समुझा और प्रमाद में आ अन्यका अन्य कल्पना किया जिस से इस सुख मंडल में यह असन्न दुःख प्राप्तहुआ। अबउस के निवारण के हेतु देश हितैषी जानकर श्री व्यासदेव के मतानुसार जो मनीषा पंचक नामक ग्रन्थहै उसकी भाषाकी जातीहै। और इसका प्रसङ्ग माधवाचार्य्यने शङ्कर दिग्विजय में लिखाहै उसके जानने के लिए शङ्कर दिग्विजय मे सें उतने श्लोकों की भाषा यहां-लिखतेहैं॥ श्लोक। मूल। कदाचिच्छङ्कराचार्य्यः काशीम्प्रतिपुरीय

यौ ततःज्ञानपरीक्षार्थंकश्चिद्देवस
मागतः १ ॥ टीका ॥ किसी समय शं
कराचार्य काशीपुरी में गये तब वहां उनकी
विद्याकी परीक्षा हेतु कोई देव उनके सन्नि
कट आए १ व्याख्या ॥ यह प्रसिद्ध है-
कि शङ्कराचार्य दक्षिण देश निवासी रहे पं-
डितोंसे शास्त्रार्थ और विजय करते हुए का
शीमें आए। उस समय विश्वनाथजी उन्हें
निज भक्त जान डोमका रूप धारण कर दृढ़ज्ञा
न करने के निमित्त परीक्षाके लिए आए ॥ मू॰
चण्डालरूपतन्दृष्ट्वागच्छगच्छेति-
चाब्रवीत् तथोक्तवन्तमाचार्यंसदे
वपुनरब्रवीत् २ ॥ टी॰ उस देव को डो
म रूप धर देखकर शंकरस्वामीने जावरक

हा इसपर उसदेवने उनसे फिर यह प्रश्न किया २॥ मू॰ अन्नमयादन्नमयम थवाचैतन्यमेवचैतन्यात् द्विजव- रदूरीकर्त्तुंवाञ्छसि किंब्रूहिगच्छग च्छेति ३॥ टी॰ हेब्राह्मण क्षत्री औ वैश्यों से श्रेष्ठजाव २ इस शब्दसे तुमारा क्या अभि प्राय है क्या अन्न विकार जनित देहको देह से दूर किया चाहते हो याशरीर निवासी ज्ञान को दूसरे शरीर वासी ज्ञानसे बिलग किया- चाहते हो सो बतावो ३॥ मू॰ किंइ‌ङ्गा म्बुनि बिम्बतेंबरमणौचण्डालवाटी पयःपूरेवान्तरमस्तिकाञ्चनघटीम् त्कुंभयोर्वांवरे प्रत्यग्वस्तुनिनिस्त रंगसहजानन्दावबोधाम्बुधौविप्रोयं

श्वपचोयमित्यपिमहान्कोयंविभेद
भ्रमः ४ ॥ टी॰ गङ्गाजलमें प्रति बिं
बरूप स्थितआकाशमणि कहैं सूर्य औ
डोमके वीथीके दुर्गन्धमलिनजल में पड़े
हुए उसीसूर्य के प्रतिविम्ब से क्या भेद है
तात्पर्य्य यह कि गङ्गाजल में सूर्य्य की
परछांहीं और मलिनजल में सूर्यकी प
रछाहीं से कुछ भेद नहीं है ऐसे ही सब श
रीर में ब्रह्मकी छाया पड़ी है तौ इसमतके
अनुसार ज्ञान२से भिन्न नहीं हो सक्ता अ
थवा सुवर्ण घटके आकाश औ मृत्तिका-
घट के आकाश में कुछ भेद नहीं तो साङ्ख्य
और वेदान्त दोनो मत के अनुसार शङ्कराचा
र्य के उक्त वचन खण्डन हुए । कदाचित क

हो कि ज्ञान से ज्ञानको नहीं दूर किया चाहते
परन्तु अपनी पवित्र शरीर सें तुम्हारी अ
पवित्र शरीरको दूर किया चाहते हैं यह भी
नहीं होसक्ता क्योंकी सब संसार दुःख मय
औ अल्पज्ञ देख पड़ताहै केवल ब्रह्म हो
सुख औ ज्ञान रूपहै इसी से ब्रह्म संसार की
अपेक्षा प्रत्यक् कहलाता है और वही वस्तुहै
अर्थात् तत्वहै और सब शून्य अर्थात् कुछ
नहींजैसे स्वप्नावस्था में हाथी घोड़े अनेक प
दार्थ भासमान होतेहैं परन्तु वास्तव कोईभी न
हीं ऐसही नदीके तरङ्ग सी आतीजाती वस्तु
ओंसे ब्रह्म पृथक् है। स्वतः सिद्ध सुखस्वरू
प और ज्ञानस्वरूपहै औसमुद्र वत् प्रमाण
रहितहै ऐसा एक ब्रह्म मैंहीं हूँ ऐसीबुद्धि

में सत्यपदार्थ ज्ञात होताहै इसके व्यतिरेक जावत पदार्थ देखपड़तेहैं सो सब मिथ्याहैं फिर यह ब्राह्मण और यह चाण्डाल है ऐसी बुद्धि भी मिथ्याहै । यहबात सिद्धान्त ठहरी कि ब्रह्म एक है और शरीरादि कुछ नही तो किसी प्रकार से गच्छ २ कहना उचित नही ४ यहबात चाण्डालसे सुनकर शङ्कराचार्य चण्डाल रूप देवको ज्ञानी समुझ कहतेहैं।

शङ्कराचार्यउवाच । श्लोक । सूल

जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिषुस्फुटतरायासंविदुज्जृंभतेयाब्रह्मादिपिपीलिकान्ततनुषुप्रोताजगत्साक्षिणीसेवाहंनचदृश्यवस्त्विति दृढाप्रज्ञापियस्यास्तिचेच्चाण्डालोस्तुसतुद्विजो-

स्तुगुरुरित्येषामनीषामम १ ॥ टी॰
चक्षुः श्रोत्र घ्राण रसना और त्वक अर्थात
नेत्र कान नाक जिह्वा और चर्म में रहनेवा
ली इन ज्ञान इन्द्रियोंसे वस्तुओंके जानने
कासमय जाग्रत अवस्था कहलाती है।—
फिर इन्द्रियोंके व्यापार दूर होनेपर जाग्र
त अवस्था में देखे सुने हुए पदार्थों के
सँस्कार बलसे जो ज्ञान होताहै उसे स्वप्नअ
वस्था कहते हैं। और घोर निद्रा में जब बु
द्धिका किसी वस्तु से नही सम्बन्धरहता के
वल ज्ञानही मात्र रहजाताहै उसे सुषुप्ति
अवस्था कहते हैं. इनतीनो अवस्थामें
सच्चिद अर्थात् ज्ञानस्वरूप प्रकाशमानरह
ताहै। और ब्रह्मा जगत्कर्त्तासे लेकर चींटी

पर्यन्तमें एकही प्रकारसे विद्यमानहै औ
र सर्वजगत्को देखनेवाला सो ज्ञानस्वरू
पहमहैं। और समस्त दृश्य वस्तु कुछ न
ही ऐसी दृढ़ बुद्धि जिसपुरुषको हो चाहे
चाण्डाल हो चाहे ब्राह्मण हो चाहे क्षत्री
औ वैश्यहो वह हमारा गुरू और ब्रह्मस्व
रूपहै यहहमारी मनीषा अर्थात् बुद्धि नि
श्चै करती है १ ॥ मू॰ ब्रह्मैवाहमिदं
जगच्चसकलं चिन्मात्रविस्तारि
तं सर्वंचैतदविद्यया त्रिगुणयाशेषं
मयाकल्पितम् इत्थंयस्यदृढामः
तिः सुखतरे नित्ये परे निर्मले चंडा
लोऽस्तु सतु द्विजोऽस्तु गुरुरित्येषाम
नीषामम २ ॥ टी॰ हम ब्रह्मस्वरूपहैं

यह साराजगत् चिद्रूप ब्रह्ममें अर्थात्
ज्ञानस्वरूप ब्रह्म में विस्तरित है और शे
ष अर्थात् ज्ञानसे भिन्न जितने पदार्थ
हैं उन्हे अनादि से चले आते जो त्रिगुणा
त्मक अर्थात् सत्व रजो औ तमोगुण मा
या है अर्थात् भ्रान्तज्ञान उस्से हमने कल्प
ना कर रक्खा है। इस प्रकार की दृढ़ बुद्धि
जिसकी सुख स्वरूप नित्य सबसे परे औ
र निर्मल अर्थात् अविद्यारहित परमात्मा
में है वह जीव चाण्डाल हो वा ब्राह्मणादि-
हमारा गुरु है ऐसी हमारी बुद्धि है २॥ मू०
शश्वन्नश्वरमेव विश्वमखिलं निश्चि
त्य वाचा गुरोर्नित्यम्ब्रह्म निरन्तरं वि
मृशता निर्व्याजशान्तात्मना भूतं भा

विचद्दुष्कृतंप्रदहतासंविन्मयेपा-
वकेप्रारब्धायसमर्पितंस्ववपुरि
त्येषामनीषामम ३॥टी॰ गुरुवा
क्यसे समस्त जगत को नाशवान् निश्चय
स मुझ के नित्यब्रह्मका निरन्तर भावना
करनेवाला और निष्कपट माया प्रपंचसे
रहित शान्त सब वस्तु ओं की इच्छा से र
हित जिसका अन्तःकरण है। और भूत-
भविष्य और वर्त्तमान के दुष्कृत पापोंको
अहंब्रह्मास्मि रूपी ज्ञानस्वरूप अग्नि में-
दहनकरनेवाला और प्रारब्ध कहैं पूर्वके
कर्मजो अवश्य फलदायक हैं उन पर अप
नी शरीर को समर्पणकरने वाला अर्थात् पूर्व
जन्मके कर्म जिससे यह शरीर प्राप्त हुआ

है इसीसे चाहे जीवे चाहे मरे ऐसा समझ
शरीर का ममता अभिमान त्याग करने वा
ला जो पुरुष है चाहे चाण्डाल हो चाहै ब्राह्म
ण वह हमारा गुरु है ऐसी हमारी बुद्धि है ३ ॥
मू० यातिर्य्यङ्नरदेवताभिरहमित्यं
तःस्फुटागृह्यतेयद्भासाहृदयाक्ष
देहविषयाभान्तिस्वतोचेतनाः तां
भास्यैःपिहितार्कमण्डलनिभांस्फू
र्त्तिःसदाभावयन्योगीनिर्वृतमानसो
हिगुरुरित्येषामनीषामम ४ ॥ टी०
स्फूर्त्ति अर्थात् चैतन्य स्वरूप ब्रह्म जो तिर्य
क कहैं पशुपक्षी मनुष्य औ देवतादि कोंके
मन में अहम्बुद्धि ज्ञात होता है और जिस स्फू
र्त्तिके किरण से मन दश इन्द्रिय शरीर औ श

ब्द स्पर्श रूप रस और गंधादि सम्पूर्ण वि
षय स्वतः अचेतन भी चेतन से भासमान
होतेहैं और वह स्फूर्त्ति मेघादिकोंसे आ
च्छादित सूर्य्य मण्डल के सदृश उस प्र-
काश को सदा प्रतिसमय विचार करनेवा
ला जोगी एकाग्र चित्तवान् और निर्वृत
मानस अर्थात् मोक्षसुख का जानने वाला
जो पुरुष है सो हमारा गुरू है ऐसी हमारीबु
द्धि है ४ ॥ मू० यत्सौख्यांबुधिलेशा
लेशतइमेशक्रादयोनिर्वृतायच्चि
त्तेनितरांप्रशान्तकलनेलब्ध्वामु
निर्निर्वृतः यस्मिन्नित्यसुखांबुधौ
गलतिधीर्ब्रह्मैव नब्रह्मविद्यःकश्चि
त्ससुरेन्द्रवन्दितपदोनूनंमनीषाम

॥इतिश्रीमच्छंकराचार्यविरचितंम नीषापंचकंसंपूर्णम्॥ ॐ॥शुभम्

टी॰ जिस सुख समुद्रके कणोंके कणोंसे इन्द्रादि देवता लोग सुखीहैं और जिससु खको अत्यन्त प्रशान्त निश्चल चित्तमें पा कर मनन शील मुनिजन निर्वृत्त हो मोक्ष-सुखको प्राप्तहोतेहैं और उस सुख समुद्र में अहम्ब्रह्मसे गलित बुद्धिवाला अर्थात् ऐसी बुद्धिधाराको लय करदेनेवाला ब्रह्मस्वरू पहोजाताहै फिर वह ब्रह्मज्ञानी भी नहीं र-हता अर्थात् अहम्ब्रह्म बुद्धि करते २ वह म नुष्य ब्रह्मस्वरूपही होताहै फिर उसकी य ह अहम्ब्रह्मकी बुद्धि भी पश्चात् जातीरह तीहै। ऐसा सुख स्वरूप पुरुष जो कोई हो

अवश्यवह इन्द्रादिकों कर पूजनीयहै औ
र उसे इन्द्रादिनमस्कार भीकरतेहैं ऐसीह
मारीबुद्धिहै। मुख्य आशय यह कि हमने
लोक व्योहार दृष्टिकर तुमको हटाया पर
न्तु तुम हमारे गुरूहो यह शङ्कराचार्यने
कहा ॥ ५ ॥ इतिश्रीमनीषापंचक की भा
षाटीका समाप्तम् ॥ श्रीविश्वेश्वरप्रसन्न
॥ लि· महादेवदीक्षित तिलक ॥ ६ ।